

मंसूर और अन्य

बनाम

मध्य प्रदेश राज्य

6 मई, 1971

[आई.डी. दुआ और वी.भार्गव, जेजे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1898, धारा 4(1)(टी), 492, 417(3)-अभियुक्त को बरी किए जाने के विरुद्ध उच्च न्यायालय में अपील प्रस्तुत करना-अतिरिक्त सरकारी अधिवक्ता जब लोक अभियोजक नियुक्त करता है तब अपील प्रस्तुत कर सकता है- ऐसी अपील एक 'मामला' है जिसमें लोक अभियोजक कार्य करने के योग्य है-बरी होने के खिलाफ अपील की सुनवाई में उच्च न्यायालय की-सिद्धांत।

भारत का संविधान, अनुच्छेद 136- विशेष अवकाश द्वारा अपील में तर्क।

अपीलार्थियों पर हत्या और हत्या का प्रयास के अपराधों के लिए पांच अन्य लोगों के साथ आरोप लगाए गए थे। विचारण न्यायालय ने पांच अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया। अपीलार्थियों में से चार को विचारण न्यायालय ने दोषी ठहराया, उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को बरकरार रखा। पाँचवें अपीलार्थी को विचारण न्यायालय ने बरी कर दिया था, लेकिन उच्च न्यायालय ने राज्य की अपील में उसे दोषी ठहराया था। विशेष अनुमति द्वारा अपील में इस न्यायालय के समक्ष यह तर्क दिया गया था (i) कि अपीलकर्ताओं की दोषसिद्धि को साक्ष्य के आधार पर कायम नहीं रखा जा सकता है; (ii) कि उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ताओं में से एक के खिलाफ विचारण न्यायालय द्वारा बरी किए जाने के फैसले को उलटते हुए इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मुख्य सिद्धांतों का पालन नहीं किया था; और (iii) कि अतिरिक्त सरकारी अधिवक्ता को उच्च न्यायालय

में बरी किए जाने के खिलाफ अपील प्रस्तुत करने के लिए अधिकृत नहीं किया गया था क्योंकि ऐसी अपील एक 'मामला' नहीं थी।

**अभिनिर्धारित किया :** (i) संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत यह न्यायालय आम तौर पर गवाहों की विश्वसनीयता पर विचार के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं करता है। जब तक कि विचारण कुछ अवैधता या प्रक्रियाओं की अनियमितता से दूषित नहीं होता है या उनके प्राकृतिक न्याय के नियमों का कुछ उल्लंघन नहीं होता है जिसके परिणामस्वरूप अनुचित परीक्षण होता है, या जब तक कि निर्णय के परिणामस्वरूप न्याय का घोर अपनं नहीं होता है, यह न्यायालय एक नियम के रूप में अपने स्वयं के स्वतंत्र निष्कर्ष पर आने के लिए साक्ष्य का मूल्यांकन करने के लिए आगे नहीं बढ़ता है। वर्तमान मामले में अपीलार्थियों के अधिवक्ता द्वारा ऐसी कोई दुर्बलता नहीं बताई गई थी। [736 एफ]

(ii) अपीलार्थियों के अधिवक्ता भी यह दिखाने में असमर्थ थे कि उच्च न्यायालय ने एक अपीलार्थी के खिलाफ विचारण न्यायालय के फैसले को पलटते हुए इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों का पालन करने में विफल रही थी। [737 एच]

संवत सिंह और अन्य बनाम राजस्थान राज्य, [1961] 3 एस.सी.आर. 120, केशव गंगा राम नवगा और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, आपराधिक अपील संख्या 100/68 दिनांक 3-2-197, शीओ स्वरूप बनाम किंग एम्परर, (1934) एल.आर. 61 आई.ए. 398 और लक्ष्मण कालू बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए.आई.आर. 1968 एस.सी. 1390, संदर्भित।

(iii) अपील प्रस्तुत करने वाला अतिरिक्त सरकारी अधिवक्ता उच्च न्यायालय में बरी होने के खिलाफ उच्च न्यायालय में लोक अभियोजक के रूप में मध्य प्रदेश राज्य में उत्पन्न होने वाले मामलों के संबंध में अधिसूचित किया गया था। जिस मामले के

परिणामस्वरूप आरोपी व्यक्तियों को बरी किया गया वह स्पष्ट रूप से राज्य में उत्पन्न होने वाला और अधिसूचना के विचाराधीन मामला होगा। धारा 4(1)(टी) दं.प्र.सं. जो 'लोक अभियोजक' को धारा 492 दं.प्र.सं. के साथ परिभाषित करता है जिसके तहत राज्य सरकार को लोक अभियोजकों की नियुक्ति करने का अधिकार है, अतिरिक्त सरकारी अधिवक्ता को जब मध्य प्रदेश राज्य में उत्पन्न होने वाले मामलों के संबंध में उच्च न्यायालय के लिए लोक अभियोजक के रूप में नियुक्त किया जाता है, तो उसे एक लोक अभियोजक माना जाना चाहिए जो बरी करने के आदेशों के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील पेश करने के लिए कानूनी रूप से सशक्त है। [740 सी]

भीमप्पा बसप्पा भु सन्नयार बनाम लक्ष्मण शिवरायप्पा समगौड़ा और अन्य, ए.आई.आर. 1970 एस.सी. 1153 और भगवान दास बनाम द किंग, ए.आई.आर. 1949 पी.सी. 263, संदर्भित।

आपराधिक अपील क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील सं. 30 और 31/1967।

आपराधिक अपील संख्या 248 और 313 ऑफ 1965 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय इंदौर पीठ के निर्णय और आदेश दिनांक 21 अप्रैल, 1966 से विशेष अनुमति द्वारा अपील।

नूर-उद-दीन अहमद, सी.एल. सरीन, जे.सी. तलवार और आर.एल. कोहली, अपीलार्थियों की ओर से (आपराधिक अपील संख्या 30/1967 में)।

आई.एन. श्राफ, अपीलार्थी की ओर से (आपराधिक अपील संख्या 31/1967 में)

नूर-उद-दीन अहमद, सी.एल. सरीन, एस.के. मेहता और के.एल.मेहता, प्रत्यर्थी संख्या 1 से 4 और 9 (आपराधिक अपील संख्या 31/1967 में)।

न्यायालय का निर्णय **दुआ, न्यायाधिपति** द्वारा दिया गया था।

विशेष अवकाश द्वारा की गई दो अपीलें हैं। एक अपील में मंसूर, राशिद, इशाक, यूनुस और महमूद पुत्र भोंडेखान अपीलकर्ता हैं और दूसरे में राज्य ने अजीमखान, हकीमखान, महमूदखान पुत्र दिलावरखान, गब्बू और महमूद पुत्र भोंडे खान को बरी करने के खिलाफ अपील की है। सभी दस अभियुक्त, नामतः मंसूर पुत्र भोंडेखान, राशिद पुत्र अल्लाबेली, इशाक पुत्र वली मोहम्मद, यूनुस पुत्र मोहम्मद हुसैन, अजीमखान पुत्र वारिशखान, हकीमखान पुत्र अनाशन, महमूदखान पुत्र दिलावरखान, गब्बू पुत्र मोहम्मद शरीफ, महमूद पुत्र भोंडेखान और मक्कू पुत्र भोंडे खान पर अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, इंदौर द्वारा धारा 302/34, 302/149, 307/34 और 307/149 आई.पी.सी. के तहत अपराधों के लिए आरोप लगाया गया और विचारण किया गया। उनमें से 8 अभियुक्त व्यक्तियों, जैसे मंसूर, राशिद, इशाक, यूनुस, अजीमखान, हकीमखान, महमूदखान पुत्र दिलावरखान और महमूद पुत्र भोंडेखान पर अतिरिक्त धाराओं 302, 307 और 148 आई.पी.सी. के तहत आरोप लगाया गया था। ये सभी आरोप 19 जनवरी, 1965 को बॉम्बे बाजार चोराहा में लगभग 1 बजे करामत बेग पहलवान पुत्र मिर्जा करीम बेग की हत्या और एक ही समय और स्थान पर मृतक करामत बेग पहलवान पुत्र इकबाल बेग की हत्या के प्रयास से संबंधित है।

विचारण न्यायालय ने मंसूर, राशिद, इशाक और यूनुस को दोषी करार किया और बाकी को संदेह का लाभ देते हुए बरी कर दिया। गब्बू के संबंध में यह देखा गया कि उसके पास अपराध में लिस कोई हथियार कब्जे में नहीं पाया गया और कि यह नहीं कहा जा सकता कि उसे मंसूर के नेतृत्व वाली पार्टी के सदस्यों के उद्देश्य के बारे में कोई जानकारी थी। इसलिए उसे इस सभा का सदस्य नहीं माना गया। उनके खिलाफ कोई अन्य मामला बनाने की मांग नहीं की गई थी।

विचारण न्यायालय ने मृतक करामत बेग की तीन चोटों में से प्रत्येक (सं. 2, 3 और 9) करामत की मृत्यु का कारण बनने के लिए प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में

व्यक्तिगत रूप से पर्याप्त माना था। लेकिन क्योंकि कोई भी आरोपी व्यक्ति संदेह से परे साबित नहीं हुआ कि उसने मृतक को कोई विशेष घातक चोट पहुंचाई है, उन सभी को भा.दं.सं. की धारा 302 सपठित धारा 34 के तहत दोषी ठहराया गया था। सामान्य इरादे की खोज पर आने के लिए, मथुराला आदि रेड्डी बनाम हैदराबाद राज्य (1) पर निर्भरता रखी गई थी। इकबाल बेग को लगी चोट का आरोप मंसूर पर लगाया गया था, लेकिन इस चोट को केवल एक अपराध अंतर्गत धारा 324 भा.दं.सं. के तहत माना गया था। क्योंकि चारों आरोपी सामान इरादे से हमला करने में शामिल हुए थे, उन सभी को दोषी धारा 324 सपठित धारा 34 भा.दं.सं. के तहत दोषी ठहराया गया था। 302/34 भा.दं.सं. के तहत सभी चारों अभियुक्तों को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई और धारा 324/34 भा.दं.सं. के तहत उन्हें 6 महीने की कठोर कारावास की सजा सुनाई गई।

दोषी व्यक्तियों ने अपनी दोषसिद्धि के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील की और राज्य ने अन्य लोगों को बरी करने के खिलाफ अपील की। राज्य ने दोषी लोगों को दी गई सजा में वृद्धि के लिए एक पुनरीक्षण याचिका भी प्रस्तुत की।

उच्च न्यायालय ने मंसूर, राशिद, इशाक और यूनस की दोषसिद्धि को बरकरार रखा और उनकी अपील खारिज कर दी। इसने केवल महमूद पुत्र भोंडेखान के बरी होने के खिलाफ राज्य की अपील को स्वीकार किया और उसे विचारण न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए गए चार व्यक्तियों के साथ दोषी ठहराया। परिणाम यह हुआ कि सभी पांच दोषी अभियुक्तों के खिलाफ धारा 148 भा.दं.सं. और धारा 302/149 भा.दं.सं. के तहत आरोप भी साबित हो गए। इस आरोप को धारा 302/34 भा.दं.सं. के तहत आरोप के अलावा माना गया था। इसी तरह इकबाल बेग को लगी चोट के संबंध में, धारा 302/149 भा.दं.सं. के तहत आरोप सिद्ध हुआ। अंतिम परिणाम में, महमूद पुत्र भोंडेखान के साथ-साथ विचारण न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए गए चार अभियुक्त व्यक्तियों को धारा

302/34 भा.दं.सं., धारा 302/149 भा.दं.सं. और धारा 148 भा.दं.सं. तहत अपराधों का दोषी ठहराया गया था। इकबाल बेग को भी लगी चोटों के सम्बन्ध में भी इन सभी पाँच ब्यक्तियों को भा.दं.सं. की धारा 324 सपठित धारा 34 और 149 तहत अपराधों का दोषी ठहराया गया।

इस अपराध के लिए सजा बरकरार रखी गई थी, लेकिन उन्हें इसके अलावा धारा 148 भा.दं.सं. के तहत एक वर्ष तक कठोर कारावास की सजा सुनाई गई थी। उच्च न्यायालय को भा.दं.सं. की धारा 34 और 149 के साथ पठित धारा 302 के तहत अपराध के लिए आजीवन कारावास की सजा को मौत की सजा में बढ़ाने के लिए कोई ठोस आधार नहीं मिला। पुनरीक्षण को तदनुसार खारिज कर दिया गया।

इस न्यायालय में फिर से दो अपीलें हैं- एक उच्च न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए गए पांच अभियुक्तों द्वारा और दूसरी शेष पाँच अभियुक्त व्यक्तियों को बरी किए जाने के विरुद्ध राज्य द्वारा। राज्य की अपील में दिन दहाड़े जघन्य हत्या के मामले में आजीवन कारावास की सजा को अपर्याप्त कहा गया। ये दोनों अपीलें इस न्यायालय में संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत विशेष अनुमति द्वारा प्रस्तुत की गई हैं। जिनको हमारे द्वारा पहली बार 27 और 28 अगस्त और 22 सितंबर, 1970 को सुना गया। अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि अभियुक्त व्यक्तियों ने मजिस्ट्रेट न्यायालय में बचाव गवाहों के कोई सूची प्रस्तुत नहीं की थी। हालाँकि, 13 गवाहों की एक सूची अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के न्यायालय में प्रस्तुत की गई थी और उन गवाहों के सम्बन्ध में समन जारी किए गए थे। जिस दिन बचाव पक्ष के गवाहों का परिक्षण किया जाना था वे इस परिणाम के साथ उपस्थित नहीं थे कि विचारण न्यायालय ने उनकी पेशी को और स्थगित करने से इनकार कर दिया। विचारण न्यायालय में बहस के समय का बचाव पक्ष के गवाहों की पेशी के लिए स्थगन देने से इंकार के कारण आरोपी व्यक्तियों के प्रति पूर्वाग्रह का सवाल उठाया गया था, लेकिन न्यायालय ने इस बात पर विचार नहीं

किया कि कोई पूर्वाग्रह था जिसके परिणामस्वरूप उन अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ मामला दर्ज किया गया जिनका परिक्षण किया जाना था। अभिलेख से हम पाते हैं कि केवल मंसूर, महमूद पुत्र भोंडेखान, महमूदखान पुत्र दिलावरखान, हकीमखान और अजीमखान बचाव पक्ष के गवाहों को परीक्षित कराना चाहते थे। अन्य आरोपी व्यक्तियों ने बचाव में किसी भी गवाह से पूछताछ करने से इनकार कर दिया था। 13 गवाहों की सूची में से श्री बोंगे हस्त-लेखन विशेषज्ञ को छोड़ दिया गया। जिन परिस्थितियों में बचाव पक्ष के गवाहों को विचारण न्यायालय द्वारा अनुमति नहीं दी गई थी वह यह है कि 10 जून, 1965 को, अभियुक्त व्यक्तियों को अपना बचाव करने के लिए बुलाया गया। यह पाया गया कि बचाव पक्ष का कोई भी गवाह उस दिन न्यायालय में उपस्थित नहीं था। ऐसा भी प्रतीत होता है कि जिस याचिका के समर्थन में गवाह संख्या 9 और 13 को छोड़कर अन्य गवाहों से पूछताछ की मांग की गई थी, वह एक बहाना था। विचारण न्यायालय ने आरोपी व्यक्तियों को 11 जून, 1965 को गवाहों की उपस्थिति सुनिश्चित करने में सक्षम बनाने के लिए केवल एक दिन के लिए स्थगन दिया। उस दिन, दो गवाहों के स्टेशन से बाहर होने की सूचना मिली और एक गवाह के संबंध में यह बताया गया था कि उस पते पर उस नाम का कोई व्यक्ति नहीं था जो अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत बचाव पक्ष के गवाहों की सूची से लिया गया था। मुंशी को समन वापस नहीं मिला था। इन परिस्थितियों में बचाव बंद कर दिया गया था।

इस शिकायत पर श्री नूरुद्दीन ने हमें संबोधित करने के बाद, हमने उनसे पूछा कि क्या वह इस स्तर पर बचाव में गवाहों की जांच करना आवश्यक समझते हैं। विद्वान अधिवक्ता ने अपने मुवक्किलों से परामर्श करने और मामले पर विचार करने के बाद न्यायालय में कहा कि उन्हें इस अंतिम चरण में कोई बचाव साक्ष्य पेश करने में कोई दिलचस्पी नहीं है। इसके बाद बहस जारी रही और व्यावहारिक रूप से बहस के अंत में श्री नूरुद्दीन ने मामले पर पुनर्विचार करते हुए बचाव साक्ष्य पेश करने की

अनुमति देने की इच्छा व्यक्त की। हमने तदनुसार 22 सितंबर, 1970 को एक आदेश दिया जिसमें विचारण न्यायालय को निर्देश दिया गया कि वह आरोपी व्यक्तियों को 10 गवाहों की जांच करने की अनुमति दे। यह अनुरोध, हालांकि देर से किया गया था, न्याय के हित में अनुमति दी गई थी। हालाँकि, विचारण न्यायालय में बचाव में केवल एक गवाह मुंशी खान पुत्र कासम से पूछताछ की गई थी। इस गवाह के अनुसार वह 16 जून, 1965 को विचारण न्यायालय गया था, लेकिन किसी लिपिक या चपरासी ने उन्हें सूचित किया कि मामले का फैसला पहले ही हो चुका है, जिसके बाद वे घर लौट आया। उनके साक्ष्य के अनुसार लगभग 5 या 6 साल पहले जब यह घटना हुई थी, तब उनकी माँ बीमार थीं और उन्हें एम.वाई. अस्पताल में भर्ती कराया गया था। विचाराधीन घटना उनके अनुसार आगरा होटल के पास बॉम्बे बाजार में हुई थी। गवाह मेहराबखान पटेल से मिलने जाता था, जिनकी बॉम्बे बाजार में दूध की दुकान थी और वास्तव में वह मेहराब खान के घर पर सोता था। घटना के दिन दोपहर करीब 12 बजे गवाह और छोटेखान आगरा होटल के पास एक-दूसरे से बात कर रहे थे जब उन्होंने देखा कि करामत पहलवान मोचीपुरा की ओर से इशाक और मंसूर को गाली दे रहे थे। मंसूर को भी आगरा होटल के सामने खड़ा देखा गया। करामत पहलवान कहता है कि मंसूर के नौकर अपने गुरु के उकसावे के कारण उनके बारे में बहुत अधिक सोचने लगा था और 2 या 2 1/4 फीट लम्बी और 1 या 1 1/4 इंच मोटी छड़ी लेकर मंसूर की ओर दौड़े। करामत ने मंसूर के सिर पर छड़ी से वार किया। मंसूर का खून बहने लगा। छोटेखान ने मंसूर को अपनी साइकिल पर पुलिस स्टेशन ले गया। वहाँ बहुत भीड़ जमा हो गई लेकिन गवाह वहाँ से चला गया। यह गवाह ने अपने मुख्य परीक्षण में यही सब कहा है। जिरह में उसने कहा कि उन्हें घटना की तारीख याद नहीं है और यह भी कि उसे नहीं पता था कि छोटेखान जीवित था या मर गया। उनके अनुसार न्यायालय में मौजूद मंसूर को छोड़कर कोई भी आरोपी घटना स्थल पर मौजूद नहीं था। गवाह लगभग आठ



दिनों तक उसकी माँ के इलाज के संबंध में एम.वाई. अस्पताल में रहा। उन्होंने इस बात से इनकार किया कि इकबाल पुत्र करामत के हाथ में कोई छड़ी थी या उसने मंसूर को कोई झटका दिया था। यह साक्ष्य हमें पूरी तरह से अप्रभावशाली लगता है और किसी भी गंभीर विचार या टिप्पणी की आवश्यकता नहीं है।

जब ये अपीलें विचारण न्यायालय की प्रतिप्रेषण रिपोर्ट और बचाव साक्ष्य के रिकॉर्ड के साथ हमारे सामने सुनवाई के लिए आईं तो दोषी अपीलकर्ताओं की अपील के समर्थन में उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सी.एल.सरीन ने हमें फिर से सम्बंधित रिकॉर्ड के माध्यम से बताया और अपीलार्थियों का दोषसिद्धि के चुनौतीपूर्ण तर्कों को संबोधित किया। मुंशीखान की गवाही पढ़ने के बाद उन्होंने हमें उसकी गवाही स्वीकार करने के लिये राजी करने के लिए एक क्षीण प्रयास किया। अपने इस उद्यम की निरर्थकता को महसूस करते हुए उन्होंने जल्द ही प्रयास छोड़ दिया। हालाँकि उनका मुख्य और प्रमुख तर्क यह था कि जिन गवाहों के साक्ष्य पर विचारण न्यायालय ने उन पांच अभियुक्त व्यक्तियों की उपस्थिति के संबंध में भरोसा नहीं किया था, जिनके बरी होने को उच्च न्यायालय ने बरकरार रखा था वर्तमान अपीलार्थी को दोषी ठहराने के लिए विश्वास नहीं किया जाना चाहिए था। इस तर्क के समर्थन में उन्होंने हमें मृतक (पी.डब्ल्यू 1) के बेटे इकबाल बेग के साक्ष्यों से अवगत कराया और कहा कि वह एक हितबद्ध साक्षी था और उसका साक्ष्य अविश्वसनीय था क्योंकि उसकी गवाही नारायणसिंह पीडब्लू 25 के साक्ष्य से मेल नहीं खाती थी जिसने स्थल योजना तैयार की थी। अधिवक्ता ने अहमद खान पी.डब्लू.2, मोहम्मद शफी पी.डब्लू.3, इस्माइल पी.डब्लू.6, डॉ.बी.एन.चटर्जी, पी.डब्लू.10, शीतलाप्रसाद पी.डब्लू.24 और अब्दुलकादर पी.डब्लू.29 के बयानों के कुछ अंशों का भी उल्लेख किया ताकि हमें यह आश्चस्त किया जा सके कि उनके साक्ष्य विश्वसनीयता के योग्य नहीं हैं। उनका हमला प्रथम सूचना रिपोर्ट पर भी केन्द्रित था। उनके अनुसार इकबाल बेग द्वारा दर्ज कराई गई एफ.आई.आर. वास्तव में समय की पहली जानकारी

नहीं थी, क्योंकि इस घटना के संबंध में जानकारी मंसूर द्वारा पहले ही दी जा चुकी थी। हम इस अधिवक्ता से पूरी तरह सहमत होने में असमर्थ हैं कि इकबाल बेग द्वारा दर्ज कराई गई जानकारी एफ.आई.आर. नहीं थी और मंसूर ने पहले यह बयान दिया था। जाँच को बदनाम करने के उद्देश्य से पुलिस की केस डायरी की भी कुछ आलोचना की गई थी।

ये सभी तर्क जो विद्वान अधिवक्ता ने लिए हैं इस न्यायालय में इस सरल कारण के लिए आगे बढ़ने के दर्द को गलत समझा जाता है कि संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत यह न्यायालय आम तौर पर गवाहों की विश्वसनीयता पर विचार करने के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं करता है जैसे कि यह पहली अपील का न्यायालय हो। जब तक आपराधिक मुकदमे को किसी अवैधता या प्रक्रिया की अनियमितता द्वारा दूषित नहीं किया जाता है या प्राकृतिक न्याय के नियमों का कुछ उल्लंघन नहीं होता है जिसके परिणामस्वरूप अनुचित परीक्षण होता है, या जब तक कि निर्णय के परिणामस्वरूप न्याय का घोर अपमान नहीं होता है, यह न्यायालय एक नियम के रूप में अपने स्वयं के स्वतंत्र निष्कर्ष पर आने के लिए साक्ष्य का मूल्यांकन करने के लिए आगे नहीं बढ़ता है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा ऐसी कोई दुर्बलता नहीं बताई गई है।

हम प्रत्यक्षदर्शियों द्वारा बताई गई और उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार की गई अभियोजन कहानी की व्यापक आवश्यक विशेषताओं को संक्षेप में बता सकते हैं। मंसूर ने आरोपी इशाक, युनुस और गब्बू को काम पर रखा है। राशिद बचपन से ही मंसूर का दोस्त है। आरोपी महमूदखान पुत्र दिलावरखान, अजीमखान और हकीम खान तीन पठान हैं जो आमतौर पर मंसूर की दुकान पर जाते थे। कहा जाता है कि वे एक साथ अफीम की तस्करी के नापाक व्यापार में लिप्त थे। करामत बेग और उनके बेटे इकबाल बेग मंसूर की पार्टी के विरोधी हैं। वास्तव में दोनों गुटों के बीच लगातार झगड़े होते रहे हैं।

मंसूर के नौकर अक्सर करामत और उसके बेटे के प्रति आपत्तिजनक और उकसाने वाले व्यवहार करते थे। वर्तमान घटना से लगभग कुछ महीनों पहले ताजा परेशानी के परिणामस्वरूप पार्टियों के बीच दं.प्र.सं. की धारा 107 के तहत कार्यवाही भी शुरू की गई थी। 19 जनवरी, 1965 को करामत दोपहर के समय कुछ अमरूद फल और एक बोतल लेकर ताज लौंडी से अपने घर जाने के लिए निकला। वो रमजान के दिन थे। वह जवाहर मार्ग से आगे बढ़ रहा था और जैसे ही वह बॉम्बे बाजार की ओर मुड़ा, वह करामत की मुलाकात इशाक और यूनुस इशाक से हुई, जिससे वह क्रोधित हो गया। अपने युवा दिनों में करामत को एक प्रसिद्ध पहलवान के रूप में जाना जाता था। इशाक भागने लगा जिसे करामत ने इशाक चिल्लाते हुए अनुसरण किया। जब वे गैंड नेशनल बेकरी के पास पहुंचे तो उन्होंने वहां मंसूर को देखा। मंसूर के नोकारों के दुर्व्यवहार के बारे में करामत की शिकायत पर मंसूर ने जवाब दिया कि इस मामले को हमेशा के लिए एक बार सुलझा लिया जाना चाहिए। पिता की चिल्लाहट सुनकर इकबाल भी उनके पीछे चल दिया। करामत की पूछताछ के जवाब में कि क्या किया जाना है, मंसूर ने अपने नौकरों को काम शुरू करने का निर्देश दिया। इसके बाद राशिद ने करामत पर चाकू से हमला किया। मंसूर ने भी सुझाव दिया कि करामत की नसें काट दी जानी चाहिए। वहां पहुंचे इकबाल ने पास ही खड़े एक फकीर से एक छड़ी छीन ली और अपने पिता को बचाने की कोशिश की। लेकिन इससे पहले कि वह हस्तक्षेप पाता, मंसूर ने एक चाकू करामत की गर्दन पर और उसकी छाती पर मारा। यूनुस और इशाक ने भी करामत से हाथापाई शुरू कर दी। इकबाल ने उन्हें लाठी से मारा। इस मंसूर पर राशिद ने इकबाल की नसों को काटने के लिए कहा और उसने खुद भी निशाना बनाया इकबाल पर चाकू से प्रहार किया गया लेकिन प्रहार निशान से चूक गया। इकबाल इन इस बीच फिसल गया लेकिन इससे पहले इशाक ने उसके बाएं हाथ पर चोट पहुंचा दी थी। महमूद ने भी इकबाल के बाएं बांह पर एक झटका दिया। मंसूर के दल द्वारा और भी

प्रहार किये जाने पर करामत बेहोश हो गया। इकबाल सीधा पुलिस स्टेशन चला गया और रिपोर्ट दर्ज कराई। चश्मदीद गवाहों द्वारा दिए गए अभियोजन संस्करण की इन व्यापक विशेषताओं को उच्च न्यायालय द्वारा स्वीकार कर लिया गया था और चूंकि यह पार्टी गुटों का मामला था, इसलिए दोनों न्यायालयों द्वारा सबूतों की जांच की गई ताकि यह देखा जा सके कि क्या किसी के संबंध में संदेह का कोई तत्व था। जो व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से आरोपित है, उसे इसका लाभ दिया जाना चाहिए।

श्री सरीन ने इसके बाद कहा कि उच्च न्यायालय ने बरी किए जाने के विरुद्ध अपीलों से निपटने के लिए इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मानकों का पालन नहीं किया और इस दलील के समर्थन में उन्होंने संवत सिंह और अन्य बनाम राजस्थान राज्य <sup>(1)</sup> [1961] 3 एस.सी.आर. 120) मामले में इस न्यायालय के निर्णय और इस न्यायालय के एक अप्रकाशित निर्णय केशव गंगा राम नवगे और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य <sup>(2)</sup> आपराधिक नं. 100/1968 को 3 फरवरी, 1971 फैसले पर भरोसा किया। हमारी राय में, यह तर्क पूरी तरह से निराधार है। उच्च न्यायालय ने इस न्यायालय द्वारा संवत सिंह के मामले <sup>(1)</sup>[1961] 3 एस.सी.आर. 129) में निर्धारित मानकों की उपेक्षा नहीं की। उस निर्णय के अनुसार इस न्यायालय के पहले के फैसलों में इस्तेमाल किया गए बरी किए जाने के आदेश को रद्द करने के लिए "पर्याप्त और बाध्यकारी कारण" शब्दों का उद्देश्य इस विचार को व्यक्त करना है कि एक अपीलीय अदालत न केवल शीओ स्वरूप बनाम राजा सम्राट <sup>(2)</sup>(1934) एल.आर. 61 आई.ए. 398) में प्रिवी काउंसिल द्वारा निर्धारित सिद्धांतों को ध्यान में रखेगी, बल्कि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अपने स्पष्ट कारण भी देने चाहिए कि बरी करने का आदेश गलत था। हमारे समक्ष मामले में उच्च न्यायालय ने बरी करने की अपील पर विचार करते समय इन टिप्पणियों को ध्यान में रखा है। केशव गंगा राम नवगे <sup>(3)</sup>आपराधिक अपील नं. 130/1968 को 3 फरवरी, 1961 फैसले के मामले में अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य पर विश्वास नहीं

किया था जिन्होंने उनके अनुसार इस घटना के बारे में तोते की तरह बात की थी। तीन मृत्यु घोषणाओं को भी विचारण न्यायालय ने खारिज कर दिया था और अन्य सबूतों को भी अविश्वास योग्य माना गया था। उच्च न्यायालय ने बरी किए जाने के खिलाफ अपील पर तीन मृत्यु घोषणाओं में से दो पर भरोसा किया और चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य पर विचार करते समय उन गवाहों द्वारा दिए गए संस्करण की विसंगतियों और असंभवताओं पर विचार नहीं किया जैसा कि विचारण न्यायालय ने बताया था। न्यायालय ने लक्ष्मण कालू बनाम महाराष्ट्र राज्य<sup>(4)</sup> (ए.आई.आर 1968 एस.सी. 1390) में की गई कुछ टिप्पणियों को अनुमोदन के साथ उद्धृत किया जिसमें यह कहा गया था कि दोषमुक्त किए जाने के विरुद्ध अपील में उच्च न्यायालय की शक्तियाँ दोषसिद्धि के खिलाफ अपील की सुनवाई में उसी न्यायालय की शक्तियों से भिन्न नहीं हैं, लेकिन सत्र न्यायाधीश के निर्णय को उलटने में उच्च न्यायालय को सत्र न्यायाधीश द्वारा किसी विशेष गवाह पर अविश्वास करने के लिए दिए गए सभी कारणों को ध्यान में रखना चाहिए और मामले के विपरीत दृष्टिकोण रखने से पहले उन कारणों को प्रभावी ढंग से दूर करने का प्रयास करना चाहिए। हमारे समक्ष मामले में उच्च न्यायालय, हमारी राय में उच्च न्यायालय इन टिप्पणियों के खिलाफ नहीं गया। वास्तव में अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता यह दिखाने में असमर्थ थे कि कैसे उच्च न्यायालय ने बरी किए जाने के खिलाफ अपीलों पर विचार करते समय उद्धृत निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांतों की अनदेखी की थी। संवत सिंह <sup>(1)</sup>[1961] 3 एस.सी.आर. 120) के मामले में, यह ध्यान देने योग्य है कि इस न्यायालय ने अपील को खारिज कर दिया था और संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय की शक्ति के प्रयोग के संबंध में निम्नलिखित प्रावधान किए थे। वहाँ कहा गया था:

"संविधान का अनुच्छेद 136 इस न्यायालय को उन उपयुक्त मामलों में अपील पर विचार करने के लिए व्यापक विवेकाधीन शक्ति

प्रदान करता है जो अन्यथा संविधान द्वारा प्रदान नहीं किए गए हैं। यह आरक्षित शक्ति में निहित है कि इसे विस्तृत रूप से परिभाषित नहीं किया जा सकता है, लेकिन निर्णय किए गए मामले हस्तक्षेप की अनुमति नहीं देते हैं जब तक कि "कानूनी प्रक्रिया के रूपों की उपेक्षा या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के कुछ उल्लंघन या अन्यथा, पर्याप्त और गंभीर अन्याय नहीं किया गया हो", यद्यपि अनुच्छेद 136 व्यापक शब्दों में दिया गया है, इस न्यायालय की प्रथा असाधारण मामलों को छोड़कर तथ्य के प्रश्नों पर हस्तक्षेप नहीं करना है जब निष्कर्ष ऐसा हो जो न्यायालय की अंतरात्मा को झकझोर दे। वर्तमान मामले में, उच्च न्यायालय ने शेओ स्वरूप के मामले <sup>(1)</sup>(1934) एल.आर.61 आई.ए. 398) में निर्धारित किसी भी सिद्धांत का उल्लंघन नहीं किया है और ऐसे कारण भी दिए हैं जिनके कारण यह माना गया कि बरी करना उचित नहीं था। इन परिस्थितियों में, हमारे द्वारा उक्त निष्कर्षों को स्वीकार न करने का कोई मामला नहीं बनता है।"

वर्तमान मामले में हम आगे पाते हैं कि महमूद, जिसे बरी किए जाने के खिलाफ अपील पर दोषी ठहराया गया था, तब से अपनी सजा काट चुका है और अब जेल में नहीं है। अधिवक्ता ने तर्क दिया कि यदि महमूद की सजा को रद्द कर दिया गया तो धारा 148 और 149 भा.दं.सं. लागू करने का कोई औचित्य नहीं होगा। हम यह मानने के लिए सहमत नहीं हैं कि उच्च न्यायालय का निर्णय ऐसी किसी गंभीर त्रुटि से ग्रस्त है जो महमूद को दोषी ठहराने वाले आदेश में हमारे हस्तक्षेप को उचित ठहराएगा। उच्च न्यायालय ने साक्ष्यों पर विचार किया और अपने निष्कर्ष पर पहुंचा। विद्वान अधिवक्ता द्वारा न्याय के अपनं का संकेत देने वाली कोई कानूनी त्रुटि नहीं बताई गई है। यह बताया जा सकता है कि वर्तमान अपीलकर्ताओं की सजा आईपीसी की धारा 34 के साथ

पढ़ी गई धारा 302 के तहत भी है और यह सजा, किसी भी स्थिति में, अजेय होगी, भले ही आईपीसी की धारा 148 लागू न हो। हालाँकि, हम इस तर्क को स्वीकार नहीं करते हैं कि महमूद को गलत तरीके से दोषी ठहराया गया था और आईपीसी की धारा 148 आकर्षित नहीं होती है।

अंत में अधिवक्ता ने इस दलील पर जोर दिया कि उच्च न्यायालय में अपील अक्षम्य थी क्योंकि अपील प्रस्तुत करने वाले अतिरिक्त सरकारी वकील लोक अभियोजक नहीं थे। जिस राजपत्र अधिसूचना पर हमारा ध्यान आकर्षित किया गया है, उससे पता चलता है कि अतिरिक्त सरकारी वकील श्री दुबे को मध्य प्रदेश राज्य में उत्पन्न होने वाले मामलों के संबंध में उच्च न्यायालय के लिए लोक अभियोजक के रूप में अधिसूचित किया गया था। अधिवक्ता ने एक अनोखा तर्क दिया, अर्थात्, श्री दुबे को बरी करने के आदेशों के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील पेश करने के लिए लोक अभियोजक नहीं माना जा सकता, क्योंकि अपील को एक ऐसे मामले के रूप में वर्णित नहीं किया जा सकता है, जो उच्च न्यायालय में उत्पन्न हुआ था, जिसमें अकेले ही वह लोक अभियोजक के रूप में कार्य करेगा। तर्क को केवल खारिज किया जाना बताया गया है। अधिवक्ता ने इस न्यायालय के एक निर्णय से समर्थन मांगने की कोशिश की, जिसे भीमप्पा बसप्पा भु सन्नावत बनाम लक्ष्मण शिवरायप्पा समगौडा और अन्य (2) (ए.आई.आर. 1970 एस.सी. 1153) के रूप में रिपोर्ट किया गया। इस निर्णय में यह कहा गया था कि "केस" शब्द जो कि दंड प्रक्रिया संहिता द्वारा परिभाषित कानूनी हलकों में अच्छी तरह से समझा जाता है और इसका आम तौर पर अर्थ किसी व्यक्ति के अभियोजन के लिए एक कार्यवाही है जिस पर अपराध करने का आरोप है। इसमें यह भी जोड़ा गया कि अन्य संदर्भों में यह शब्द अन्य प्रकार की कार्यवाही का प्रतिनिधित्व कर सकता है। लेकिन धारा 417(3) के सन्दर्भ में न्यायालय ने कहा कि इसका मतलब एक ऐसी कार्यवाही होनी चाहिए जिसके परिणामस्वरूप अंत में या तो

निर्वहन, दोषसिद्धि या किसी आरोपी व्यक्ति को बरी कर दिया जाता है। यदि कुछ भी हो, तो यह निर्णय अपीलार्थियों के तर्क के खिलाफ जाता है। जिस मामले के परिणामस्वरूप आरोपी व्यक्तियों को बरी कर दिया गया वह स्पष्ट रूप से राज्य में उत्पन्न होने वाला मामला होगा और अधिसूचना के विचाराधीन होगा, और अतिरिक्त सरकारी अधिवक्ता जो उच्च न्यायालय के लिए लोक अभियोजक है, ऐसे मामले में अपील पेश करने का हकदार होगा। सीआरपीसी की धारा 4 (एल)(आई) को पढ़ने पर, जो सीआरपीसी की धारा 492 के साथ मिलकर "सार्वजनिक अभियोजक" को परिभाषित करता है, जिसके तहत राज्य सरकार को लोक अभियोजक नियुक्त करने का अधिकार है, अतिरिक्त सरकारी अधिवक्ता को जब उच्च न्यायालय के लिए लोक अभियोजक के रूप में नियुक्त किया जाता है। हमारी राय में, मध्य प्रदेश राज्य में उत्पन्न होने वाले मामलों में दोषमुक्ति के आदेशों के खिलाफ उच्च न्यायालय में अपील पेश करने के लिए एक लोक अभियोजक को कानूनी रूप से सशक्त माना जाना चाहिए। श्री सरीन द्वारा उद्धृत प्रिवी काउंसिल के फैसले को भगवान दास बनाम द किंग<sup>(1)</sup> (ए.आई.आर. 1949 पी.सी. 263) के रूप में रिपोर्ट किया गया, जो उनके तर्क के खिलाफ भी है। यह और भी ध्यान देने योग्य बात है कि यह आपत्ति उच्च न्यायालय में नहीं उठाई गई थी। इसलिए, हम इस दलील को कायम रखने में असमर्थ हैं कि बरी करने के आदेश के खिलाफ अपील एक अनधिकृत व्यक्ति द्वारा उच्च न्यायालय में दायर की गई थी।

अतः अभियुक्त व्यक्तियों की ओर से की गई अपील इस प्रकार विफल होनी चाहिए।

श्री श्रॉफ ने पांच आरोपियों को बरी करने के खिलाफ अपील पर जोर नहीं दिया, जो नीचे की दोनों न्यायालयों के समवर्ती आदेश पर आधारित थी। महमूद के संबंध में भी, जो अपनी सज़ा पूरी करके पहले ही रिहा हो चुका है, उसने सज़ा बढ़ाने की अपनी अपील पर गंभीरता से जोर नहीं दिया। अन्यथा भी, सज़ा बढ़ाने की प्रार्थना के संबंध



में, हमें उच्च न्यायालय के आदेश से असहमत होने का कोई ठोस आधार नहीं मिलता है।

अंतिम परिणाम में, दोनों अपीलें विफल हो जाती हैं और खारिज की जाती हैं।

जी.सी.

अपीलें खारिज की गईं।

(1) ए.आई.आर. 1956 एस.सी. 177

(2) [1961] 3 एस.सी.आर. 120

(3) आपराधिक अपील संख्या 100/1968 निर्णित दिनांक 3 फरवरी 1971

(4) आपराधिक अपील संख्या 130/1968 निर्णित दिनांक 3 फरवरी 1961

(5) ए.आई.आर. 1968 एस.सी. 1390

(6) (1934) एल.आर. 61 आई.ए. 398

(7) ए.आई.आर. 1967 एस.सी. 1153

(8) ए.आई.आर. 1949 पी.सी. 263

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक अधिवक्ता विनायक कुमार जोशी द्वारा किया गया है ।

**अस्वीकरण** - इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।

\*\*\*\*\*